शोध कैसे करें

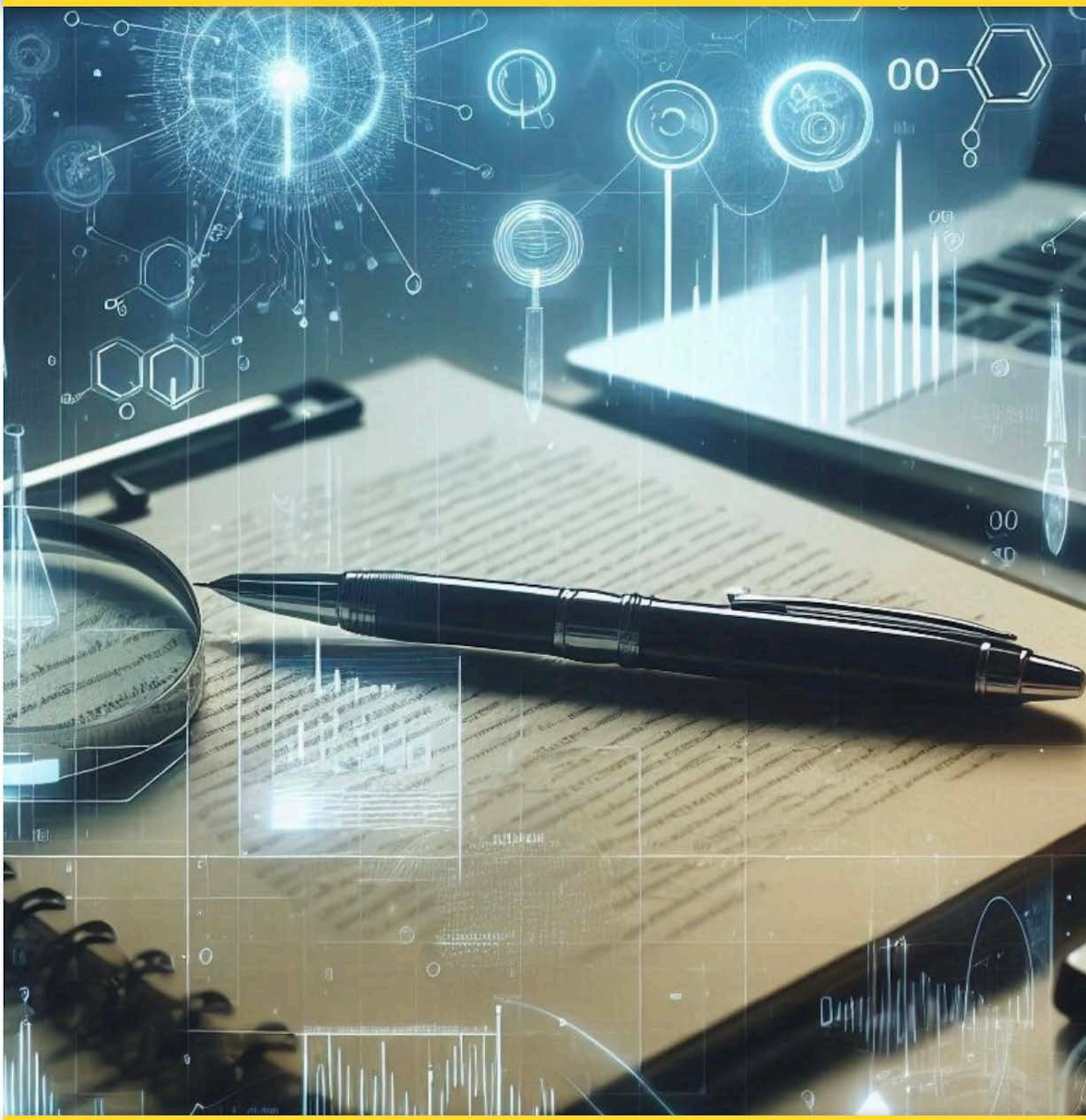

पुनीत बिसारिया

शोध कैसे करें

पुनीत बिसारिया

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: अगस्त, 2024

© पुनीत बिसारिया

समर्पण

परम पूज्य 'पापा' के श्री चरणों में

अनुक्रम

भूमिका	4
पहला कदम कैसे रखें?	9
शोध की गली में कैसे जाएं?	25
पथ के कंकड़ कैसे दूर करें?	45
हर चमकदार चीज़ सोना नहीं होती!	74
आंकड़ों की बाजीगरी	82
स्थान, वस्तुओं, पुस्तकों तथा समूहों का चुनाव	118
साक्षात्कार	127
प्रश्नावली तथा अनुसूची	178
फ़ील्डवर्क	213
आंकड़ों का विश्लेषण तथा व्याख्या	221
थीसिस लेखन	229
वाइवा	246

भूमिका

“सत्य तक पहुँचने का कोई छोटा मार्ग नहीं है विश्व के ज्ञान की प्राप्त करने का कोई मार्ग नहीं है सिवाय वैज्ञानिक पद्धति के द्वार में से गुजरने के।”

- कार्ल पियर्सन

ये पंक्तियाँ पी-एचडी. की तैयारी करने जा रहे विद्यार्थियों के लिए वेदवाक्य जैसी हैं। वास्तव में पी-एच. डी. ‘सत्य की खोज’, ‘अनदेखे का अन्वेषण’ ज्ञान के नए क्षितिज की खोज नयी अवधारणाओं की तलाश एवं वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा प्रामाणिक तथ्यों का पता लगाना है। शोध का इतिहास मानवता के विकास के शुरुआती दौर से ही प्रारम्भ हो जाता है। जिस दिन मनुष्य ने धरती पर अपने जीवन-यापन के लिए पहली वस्तु तलाशी होगी उसी दिन से शोध का इतिहास भी शुरू हो गया होगा। ऋषि-मुनि सत्य की खोज के लिए ही जंगलों की खाक छाना करते थे।

शोध का वर्तमान प्रचलित स्वरूप प्रारंभिक उन्नीसवीं शताब्दी के जर्मनी की देन है जिस पर विल्हेम वॉन हमबोल्ट के सुधारों तथा विचारों का स्पष्ट प्रभाव था। वहाँ पर इसे 'सेमिनार' नाम दिया गया और शोध निर्देशक को 'डॉक्टरवेटर' कहा गया। इस जर्मन मॉडल में वर्तमान शोध छात्र जैसी ही स्थिति शोधकर्त्ता की थी, जो मौलिक

विचारों का चिंतन करते हुए अपना भविष्य बेहतर बनाने का प्रयास करता था। वॉन हमबोल्ट के अनुसार यूनिवर्सिटी एक विशिष्ट संस्था थी, जो लगातार 'सत्य की तलाश' में लगी रहती थी। सभी प्रकार का एकेडमिक ज्ञान तथा शोध वास्तव में इसी सत्य की तलाश करता था। इन्हीं विचारों का आधार लेकर बर्लिन यूनिवर्सिटी की स्थापना की गयी थी। इस यूनिवर्सिटी ने चार सिद्धांत दिए-

1. छात्रों को 'सत्य की खोज' हेतु सीखने की आजादी थी।
2. छात्र तथा शिक्षक मिलकर सत्य की खोज करते थे।
3. अब शिक्षण कार्य न होकर केवल अनुसंधान कार्य होने लगा था।
4. नीति विज्ञान, कानून और चिकित्सा के अलावा अन्य विषयों में भी शोध किया जा सकता है, इसकी पुष्टि हुई है।

सन् 1860 ई. तक दुनिया में केवल जर्मनी में ही शोध उपाधियाँ दी जा रही थीं। सन् 1860 ई. के बाद से अमेरिका तथा ब्रिटेन दोनों ने अपने-अपने देशों में यूनिवर्सिटी सिस्टम लागू किया और 'डॉक्टरेट' का वर्तमान स्वरूप पी-एच. डी. अस्तित्व में आया। पहली पी-एच. डी. अमेरिका की येल यूनिवर्सिटी द्वारा सन् 1861 में प्रदान की गयी, किन्तु वास्तव में सन् 1880 ई. से ही पी-एच. डी. का वास्तविक स्वरूप तैयार हो सका। सन् 1890 से वास्तव में वहाँ पी-एच. डी. ने गति पकड़ी और शिकागो तथा कोलम्बिया यूनिवर्सिटी अस्तित्व में आयी। इसी समय वहाँ ज्ञान को विभिन्न

शाखाओं में बाँटा गया और अनेक विभाग (भौतिक विज्ञान जीव विज्ञान, इतिहास, दर्शनशास्त्र इत्यादि) अस्तित्व में आये। सन् 1890 ई. से ही बैचलर, मास्टर और डॉक्टर डिग्री सिस्टम भी शुरू हुआ। इस प्रकार उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सन् 1860 ई. से 1890 ई. के बीच का समय क्रान्तिकारी परिवर्तन लेकर आया। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी ने पहली पी-एच. डी. (वास्तव में इसे डी. लिट् कहना चाहिए) सन् 1917 में अवार्ड की। सन् 1920 के आस-पास ही पी-एच. डी. का एक विधिवत स्वरूप स्थिर हो पाया था। लगभग इसी समय से भारत में भी पी-एच. डी. की शुरुआत होती है।

वर्तमान समय सूचनाओं के विस्फोट का है, जिसमें एक प्रकार का सूचना युद्ध संपूर्ण विश्व में जारी है तथा जिसमें सूचना के अधिकतम सदुपयोग करने वाले व्यक्ति समाज, प्रदेश और देश ही सफलता की सीढ़ी चढ़ रहे । ऐसे समय में पी-एच.डी. जैसी डिग्री का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है। चूँकि विभिन्न विषयों में प्राप्त सूचनाओं की सहायता से तथा अपने चिंतन कौशल का प्रयोग कर नए एवं मालिक निष्कर्ष प्राप्त करना ही शोध के अन्तर्गत आता है, इसलिए यहाँ 'मौलिक सूचना की प्राप्ति' एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बिन्दु हो जाता है जिस व्यवस्थित, वैज्ञानिक एवं सुनिश्चित दृष्टिकोण से ही हासिल किया जा सकता है।।

यूँ ती शाम कार्य के विषय में समाजशास्त्रीय चिंतन के अन्तर्गत कुछ पुस्तकों में